दैनिक जागरण

मानवीय गुणों में विनम्रता सर्वोत्तम मानी जाती है

न्याय की गति

आखिरकार सात साल बाद देश को विचलित करने वाले निर्भया कांड के चार गुनहगारों के खिलाफ दिल्ली की एक अदालत ने डेथ वारंट जारी कर दिया। इसके तहत इन चारों को फांसी की सजा 22 जनवरी को दी जाएगी, लेकिन इसे लेकर सुनिश्चित नहीं हुआ जा सकता और इसका कारण यह है कि दोषियों के वकील यह दावा कर रहे हैं कि उनके पास अभी कुछ और कानूनी विकल्प हैं। निःसंदेह जघन्य अपराध के दोषियों को भी उपलब्ध कानूनी विकल्प इस्तेमाल करने का अधिकार है, लेकिन सबको पता है कि इन विकल्पों की आड़ में किस तरह तारीख पर तारीख का खेल खेला जाता है। यह केवल हास्यास्पद ही नहीं, बल्कि शर्मनाक है कि 2012 के जिस मामले ने देश को थर्रा दिया था उसके दोषियों की सजा पर अमल अब तक नहीं हो सका है और वह भी तब जब सुप्रीम कोर्ट ने अपना फैसला 2017 में ही सुना दिया था। इसके बाद जो कुछ हुआ वह न्याय प्रक्रिया की कच्छप गति को ही बयान करता रहा। न्याय प्रक्रिया की सुस्त रफ्तार से न्यायिक और प्रशासनिक व्यवस्था के शीर्ष पदों पर बैठे लोग अनजान नहीं, लेकिन दुर्भाग्य से उन परिस्थितियों का निराकरण होता नहीं दिखता जिनके चलते समय पर न्याय पाना कठिन है।

लगता है किसी को इस पर लज्जा नहीं आई कि निर्भया के मां-बाप को न्याय के लिए किस तरह दर-दर भटकना पड़ रहा? दुर्भाग्य से यह एकलौता ऐसा मामला नहीं जिसमें न्याय पाना पहाड़ जैसी समस्या बना हो। यह तो गनीमत है कि इस मामले में सात साल बाद न्याय होता दिख रहा है। अधिकांश मामलों में तो दशकों बाद भी अंतिम स्तर पर न्याय नहीं हो पाता। इनमें तमाम मामले संगीन किस्म के होते हैं। जब संगीन मामलों में भी जटिल कानूनी प्रक्रिया के कारण देरी होती है तब केवल न्याय व्यवस्था का उपहास ही नहीं उड़ता, बल्कि अपराधी तत्वों को बल भी मिलता है। यह विडंबना ही है कि सब इससे भली तरह अवगत हैं कि न्याय में देरी न्याय से इन्कार है, फिर भी वैसे प्रयास नहीं हो रहे हैं जिससे न्याय में देरी न होने पाए। बेहतर हो कि हमारे नीति-नियंता कानून के शासन को लेकर घिसे-पिटे उपदेश देने के बजाय यह देखें कि न्याय की शिथिल गति भारतीय लोकतंत्र को दुर्गति की ओर ले जा रही है। इसी के साथ समाज को भी यह समझना होगा कि दुष्कर्मी तत्वों को केवल कठोर सजा से नियंत्रित नहीं किया जा सकता। दुष्कर्म सरीखे अपराध कहीं न कहीं यह भी बताते हैं कि समाज बेहतर नागरिकों का निर्माण करने के अपने दायित्व का निर्वाह सही ढंग से नहीं कर पा रहा है।

पर्यटन स्थलों पर चुनौतियां

इन दिनों उत्तराखंड पर कुदरत मेहरबान है। बर्फ से लकदक पहाड़ों में मौसम का लुत्फ उठाने के लिए पर्यटकों का रैला उमड़ रहा है। मसूरी, औली, धनोल्टी, सुरकंडा, चोपता, हर्षिल, चकराता, नैनीताल और पिथौरागढ़ के मुनस्यारी सैलानियों के लिए आकर्षण का केंद्र बने हुए हैं। जाहिर है मसरी और नैनीताल जैसे स्थल सैलानियों की पहली पसंद हैं। उत्तराखंड में पर्यटन की दृष्टि से पर्यटकों का यह रुझान उत्साहित करने वाला है, लेकिन इसी के साथ चुनौतियां भी कम नहीं हैं। मसलन भारी बर्फबारी में सड़कों का बंद होना आम है। पाला पड़ने के बाद सड़कों पर पसरी बर्फ फिसलन भरी हो जाती है और इससे वाहनों के लिए खतरा बढ़ जाता है। पिछले दिनों सप्ताहांत में ऐसा ही हुआ। मसूरी के पास धनोल्टी में बर्फबारी का लुत्फ ले रहे पर्यटकों के वाहन लौटते हुए बीच रास्ते में फंस गए। पर्यटकों को पूरी रात वाहनों में ही बितानी पड़ी। ऐसे में पुलिस और भारत-तिब्बत सीमा पुलिस बल (आइटीबीपी) के जवान रात भर रास्ता खोलने में तो जुटे ही रहे, सैलानियों को भोजन और पानी भी मुहैया कराया। अगले दिन दोपहर बाद सैलानियों को वहां से निकाला जा सका। निश्चित तौर पर पर्यटकों की मदद कर पुलिस और आइटीबीपी के जवानों ने उत्तराखंड जैसे पर्यटन प्रदेश की छवि को निखारा है। खैर पुलिस ने हालात से सबक लेते हुए मसूरी में एक टीम तैनात कर दी है। यह टीम बर्फबारी के बीच फंसे पर्यटकों की मदद करेगी। इसके लिए एक क्रेन भी तैयार रखी जाएगी, जिससे सड़क पर फंसे वाहनों को निकालने में सहायता मिल सके। यह स्थिति सिर्फ मसूरी की नहीं, बल्कि औली, चकराता और अन्य पर्यटन स्थलों का भी है। दरअसल इन हालात में सवाल यह है कि भीड़ के प्रबंधन को लेकर वक्त रहते कदम क्यों नहीं उठाए जाते। वजह यह है कि ऐसे हालात करीब-करीब हर साल सामने आते हैं। पिछले साल चकराता के पास लोखंडी में फंसे दिल्ली के पर्यटकों को निकालने में प्रशासन को लंबा वक्त लग गया था। इसी साल थल-मुनस्यारी मार्ग पर उत्तर प्रदेश के सैलानियों को पूरी रात सड़क पर गुजारनी पड़ी। इससे पर्यटन प्रदेश की छवि को भी नुकसान पहुंचता है। ऐसे में जरूरी है कि प्रशासन, होटल व्यवसायी और पर्यटन विभाग तालमेल से कार्य करे। पर्यटन विभाग और प्रशासन को पता होना चाहिए कि पर्यटन स्थलों पर होटल की बुकिंग की स्थिति क्या है।

उत्तराखंड में बर्फ के दीदार के लिए उमड़ रहा सैलानियों का सैलाब आर्थिकी की दृष्टि से तो शुभ है, लेकिन जरूरी है कि क्राउड मैनेजमेंट को लेकर भी कसरत की जाए

बिना कानून वाली व्यवस्था

यशपाल सिंह

जब तक न्यायिक सुधार, प्रशासनिक सुधार और चुनावी सुधार नहीं होते तब तक कानून एवं व्यवस्था में सुधार नहीं होने वाला

लोकतंत्र में जनता बहुत जागरूक हो चुकी है। चूंकि स्वतंत्र प्रेस और संचार माध्यमों के साथ सोशल मीडिया का व्यापक विकास हुआ है इसलिए कोई बड़ी घटना होते ही सड़क जाम, घेराव, धरना-प्रदर्शन आदि आम बात हो गई है। इसके चलते दबाव इतना बढ़ जाता है कि आजकल की सरकारें परेशान हो जाती हैं। विपक्ष किसी भी छोटी-बड़ी घटना को बहुत बड़ा मुद्दा बनाकर धरना-प्रदर्शन करने लगता है। कभी-कभी तो यह धरना-प्रदर्शन आंदोलन का रूप ले लेता है। इस आंदोलन को विपक्षी दलों के साथ सरकार विरोधी अन्य गुट भी हवा देने लगते हैं। वे सरकार को 'निकम्मी' बताने के साथ पुलिस पर भी आक्षेप लगाने लगते हैं। ऐसे में सामान्य जनभावना सरकार के खिलाफ होने लगती है। लोकतंत्र में जनता का वोट ही सब कुछ है। ऐसे में सरकारें क्या करें? पुलिस प्रमुख यानी डीजी बुलाए जाते हैं और उनसे कहा जाता जाता है 'ऐसे काम नहीं चलेगा डीजी साहब। हमें फिर जनता से वोट मांगने जाना पड़ेगा। कैसे करेगें? क्या करेंगे? आप जानिए और आपका काम।' यही बात डीजी साहब अपने मातहत आइजी और डीआइजी से कहते हैं। आइजी और डीआइजी यही बात एसएसपी या फिर एसपी को अपनी पुलिसिया भाषा और अंदाज में समझाते हैं। एसएसपी और एसपी यही बात थानाध्यक्षों से कहते हैं। अब जो करना है वह थानाध्यक्ष को करना है। वह क्या करे? या तो वह लाइन हाजिर होकर मुंह लटकाए पुलिस लाइन चला जाए या फिर कुछ ऐसा करे कि अपराधी दहशत में आ जाएं और उसके क्षेत्र में अपराध करने की हिम्मत ही न कर सकें।

कानून एवं व्यवस्था की स्थिति आज इस हालत में पहुंच गई है कि धीरे-धीरे कानून गायब होता जा रहा है। बस व्यवस्था बची है। कोई भी सरकार व्यवस्था किसी कीमत पर ठीक रखना चाहेगी और उसे ऐसा करना भी चाहिए। चूंकि पुलिस उसके सीधे नियंत्रण में होती है अतः सारा का सारा दबाव थानेदार पर आ जाता है। न्यायिक व्यवस्था से उसे कोई विशेष मदद नही मिल पाती। अभियुक्तों को अग्रिम जमानत या फिर जमानत देर-सबेर मिल ही जाती है और ट्रायल तो फिर उनकी मर्जी से ही चलता है। प्रक्रिया के जाल में कानून इतना उलझ जाता है कि उससे निकलकर न्याय हासिल करने में दशकों लग जाते हैं। जब मामला लंबा खिंचता है तो अक्सर न्याय वादी के पक्ष में जाने की जगह अभियुक्त के पक्ष में जाने का अंदेशा बढ़ जाता है। एक जनपद में एक अपराधी ने एक दबंग की दिन दहाड़े, सरेबाजार गोली मारकर हत्या कर दी। हत्या ने जातीय रूप पकड़ लिया। वह अपराधी विधायक, सांसद, मंत्री बना। उससे संबंधित हत्या का मुकदमा सत्र न्यायालय में किसी न किसी कानूनी प्रक्रिया के दांवपेच के चलते 18-20 साल लंबित रहा। सारी परिस्थितियां जब हर तरह से अनुकूल हो गईं तो केस चला और वह बाइज्जत बरी हो गया। मालूम हुआ कि सभी गवाहों को बोलेरो गाड़ी मिल गई थी। न्यायालय को साक्ष्य चाहिए। गवाहों पर न तो नैतिक दबाव रहा और न ही सामाजिक भय। प्रशासनिक इकबाल भी नहीं रहा। शायद उनके लिए इतने दिनों बाद गवाही देने का कोई अर्थ नहीं रह गया था।

अवधेश राजपूत

फूलन देवी ने अपने गैंग के साथ 14 फरवरी 1982 को एक गांव में दिन-दहाड़े करीब 20 लोगों की हत्या कर दी थी। चश्मदीद गवाहों की कोई कमी न थी। फूलन ने मध्य प्रदेश में सरेंडर किया। फिर राजनीति में सक्रिय होकर दो बार सांसद बनीं। अंततः उनकी भी हत्या हुई। गैंग के अन्य साथियों पर मुकदमा चलता रहा। इनमें से 12 मर चुके हैं। चार बचे हुए हैं। इस मामले में सत्र न्यायालय का जो फैसला करीब 38 साल बाद इसी छह जनवरी को आने वाला था वह कुछ दिनों के लिए टल गया है। जब सत्र न्यायालय से फैसला आएगा तो उसके खिलाफ ऊपरी अदालतों में अपील होगी। कोई नहीं जानता कि अंतिम फैसला कब आएगा? आखिर न्याय किसे मिलेगा, क्योंकि फूलन गैंग के हाथों मारे गए कई लोगों के भाई-बंधु तो न्याय का इंतजार करते-करते मर गए।

हैदराबाद की मुठभेड़ के बाद मुख्य न्यायधीश महोदय ने बिल्कुल सही कहा था कि न्याय 'बदला' नहीं है और यह तात्कालिक भी नहीं हो सकता, लेकिन यह समझना होगा कि आखिर पुलिस तब भी एनकाउंटर क्यों करती है जब उस पर जांच, कार्रवाई की तलवार लटकती रहती है? अक्सर पुलिस सुधारों की बात होती है और यह कहा जाता है कि पुलिस सुधार होने से हालात बदल जाएंगे। हालांकि यह काम भी नहीं हुआ, जबकि उच्चतम न्यायालय ने पुलिस सुधार संबंधी निर्देश 2006 में ही दे दिए थे। मेरा मानना है कि केवल पुलिस सुधारों से कुछ हासिल होने वाला नहीं है। जब तक आमूलचूल न्यायिक सुधार, प्रशासनिक सुधार और चुनावी सुधार नहीं होते तब तक कानून एवं व्यवस्था में सुधार नहीं होने वाला। न्यायशास्त्र की सदियों पुरानी परिभाषा को बदलना होगा। अभी पूरी कानूनी प्रक्रिया अभियुक्त के हितों की रक्षा की ओर झुकी रहती है। ध्यान दें कि चर्चित निर्भया कांड के दोषियों की सजा पर अब तक अमल नहीं हो सका है, जबकि सुप्रीम कोर्ट का फैसला आए कई वर्ष हो चुके हैं।

वास्तव में न्यायापालिका को प्रोएक्टिव होने की आवश्यकता है। अगर फूलन देवी जैसे लोग नरसंहार करने के बाद भी सांसद बनेंगे तो समाज में क्या संदेश जाएगा? 'जब तक सजा न मिले, व्यक्ति निर्दोष है' यह सिद्धांत भी विचारणीय है और खासकर जनप्रतिनिधियों के मामले में। जब सजा मिलते-मिलते कई दशक लग जाते हैं तो फिर इस सिद्धांत का क्या अर्थ रह जाता है? न्याय मिलने की भी एक समय सीमा होनी चाहिए। न्याय समयबद्ध हो। पूरी अपराधिक न्यायिक प्रक्रिया ने पुलिस को अविश्वसनीय मान लिया है, जबकि विवेचक ही केस की सच्चाई जानता है। कोई पुलिस वाला गलत गवाही दे या साक्ष्य पेश करे तो सख्त सजा दी जाए, लेकिन पूरी पुलिस को अविश्वसनीय मान लेना कहां तक उचित है? कानून एवं व्यवस्था के मामले में समग्रता से अत्यंत गहन विचार की आवश्यकता है। मुश्किल यह है कि जो विचार कर सकते हैं उनकी कोई सुनता नहीं और जिनकी सुनता है उनके पास समय नहीं। न्याय मिला या नहीं, इस पर वोट नहीं मिलता। व्यवस्था नियंत्रित हो, इस पर जरूर सरकार की छवि बनती अथवा बिगड़ती है। पुलिस को जनता और जनप्रतिनिधियों का दबाव झेलना ही पड़ेगा। उसे न्यायपालिका की तरह वैधानिक सुरक्षा प्राप्त नहीं है। सारी समस्या का समाधान मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति में ही निहित है। जिन देशों ने कानून का राज कानून के दम पर स्थापित किया वे ही आज विकसित देश हैं। हमें भी वही राह पकड़नी होगी।

(लेखक उत्तर प्रदेश के डीजीपी रहे हैं)

response@jagran.com

बेरुखी का शिकार पर्यटन क्षेत्र

जीएन वाजपेयी

पर्यटन क्षेत्र में जीडीपी के पांच फीसद के बराबर योगदान की क्षमताएं हैं, पर उन्हें भुनाने के लिए जरूरी प्रयास नहीं हो रहे

कुछ दिन पहले कंबोडिया जाना हुआ। वहां सिएम रीप अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर शानदार वेशभूषा वाले एक गाइड ने मेरा स्वागत किया। वह अंग्रेजी में भी पारंगत निकला। कंबोडिया के इतिहास, भूगोल, संस्कृति और धार्मिक परंपराओं पर उसकी जानकारी ने मुझे बहुत प्रभावित किया। उससे भी अधिक उसके सभ्य व्यवहार ने मेरे मन को मोह लिया। अगले तीन दिनों तक मैंने इस मनमोहक पर्यटन स्थल के विभिन्न स्थानों का आनंद लिया। मुझे महसूस हुआ कि कंबोडिया ने टूरिस्ट गाइड के रूप में स्वरोजगार का एक सम्मानजनक पेशा विकसित किया है। सिएम रीप स्थित अंकोरवाट एक विशालकाय बौद्ध मंदिर परिसर है। उत्तरी कंबोडिया के इस हिस्से में मौजूद इस मंदिर का निर्माण बारहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में एक हिंदू मंदिर के रूप में हुआ था। वास्तुशिल्प के इस अप्रतिम केंद्र में हिंदू मान्यताओं से जुड़ी तस्वीरों की भरमार है। वास्तुशिल्प के ये डिजाइन निश्चित रूप से भारत से प्रेरित हैं। करीब चार सौ एकड़ से अधिक क्षेत्र में फैले इस परिसर को दुनिया में सबसे बड़ा धार्मिक स्थल माना जाता है। हॉलीवुड की लोकप्रिय फिल्म 'टूंब राइडर' के कुछ दृश्यों की शूटिंग यहां हुई थी। इसके बाद दुनिया का ध्यान इसकी ओर आकृष्ट हुआ। अंकोरवाट को विश्व विरासत स्थल का दर्जा मिला हुआ है। इस परिसर के संरक्षण को लेकर सबका ध्यान गया। मंदिर के कुछ हिस्सों का व्यापक जीर्णोद्धार होना है। इसके लिए वित्तीय संसाधन एवं तकनीक की दरकार है। भारत, चीन, जापान और जर्मनी जैसे देश इस मुहिम में मदद कर रहे हैं ताकि मंदिर के मूल स्वरूप और उसके वैभव को पुनर्स्थापित किया जा सके।

इसके उलट अगर भारत की तस्वीर देखें तो जब भारत सरकार ने कुछ पर्यटन केंद्रों के संरक्षण के लिए निजी क्षेत्र को आमंत्रित किया तो इस पर खूब हंगामा किया गया। सरकार ने कुछ वर्षों के लिए लीज के आधार पर यह व्यवस्था की। इसका मकसद उन विरासत स्थलों की मदद के लिए निजी क्षेत्र को जोड़ना था, जो स्थल वक्त के थपेड़ों से अपनी आभा खो रहे थे और जिन्हें वास्तव में अच्छे रखरखाव की दरकार थी। तब कुछ एनजीओ और निहित स्वार्थी समूहों ने इतना बखेड़ा खड़ा कर दिया मानों सरकार ने इन स्थलों को उन्हें उपहार में दे दिया या बेच दिया हो। अगर आज हंपी पर्यटन मानचित्र पर वापस उभरा है तो एक बड़ी हद तक इसका श्रेय जेएसडब्ल्यू स्टील के प्रवर्तक सज्जन जिंदल और संगीता जिंदल को जाता है। उन्होंने इसके लिए न केवल अपना समय और धन खर्च किया, बल्कि अपने संयंत्र की निजी हवाई पट्टी को वाणिज्यिक विमानों के लिए इस्तेमाल की अनुमति भी दी। इससे विजयनगर की प्राचीन राजधानी जीवंत हो उठी।

पर्यटन से होने वाले फायदों पर गौर किया जाना चाहिए। कंबोडियन न्यूज ने सिएम रीप के प्रांतीय पर्यटन विभाग के हवाले से जानकारी दी कि वर्ष 2018 के पहले नौ महीनों के दौरान सिएम रीप में 44,50,732 पर्यटक आए। इससे 4.375 अरब डॉलर की कमाई हुई। सिएम रीप एक छोटा शहर है जहां की आबादी बमुश्किल दो लाख है, लेकिन यहां बीस से अधिक पांच सितारा होटल हैं। यहां पर्यटन के जरिये सबसे अधिक रोजगार मिले हुए हैं। करीब 90 प्रतिशत आर्थिक गतिविधियां पर्यटन पर केंद्रित हैं। अंकोरवाट विदेशी पूंजी अर्जित करने वाला सबसे बड़ा माध्यम बन गया है। यह सिएम रीप और कंबोडिया की जीडीपी में अहम योगदान दे रहा है।

कंबोडिया में टूरिस्ट गाइड बनने के लिए लाइसेंस की दरकार होती है। यह लाइसेंस परीक्षा पास करने के बाद ही मिलता है। परीक्षा की प्रक्रिया के दौरान आवेदक के ज्ञान के अलावा इतिहास, भूगोल, संस्कृति एवं पर्यटन स्थलों की सटीक जानकारियों को कसौटी पर कसा जाता है। किसी एक विदेशी भाषा में महारत भी अनिवार्य है। लाइसेंस हासिल होने के साथ ही यह सिलसिला पूरा नहीं होता। उसका नवीनीकरण भी कराना होता है। पर्यटकों से अनुरोध किया जाता है कि वे अपने गाइड को रेटिंग दें। यह उनके मेहनताने को बढ़ाने में काम आती है। केवल सिएम रीप में ही सक्रिय दस हजार से अधिक टूरिस्ट गाइड आधा दर्जन से अधिक विदेशी भाषाओं में सिद्धहस्त हैं। ये स्वतंत्र पेशेवर हैं जो अपनी मर्जी से काम करते हैं। वे विभिन्न ट्रैवल एजेंसियों और टूरिस्ट गाइड एसोसिएशन से जुड़े होते हैं जो उनसे संबंधित जानकारियां सहेजकर रखती हैं। इनमें उनकी रेटिंग का भी उल्लेख रहता है। एक सम्मानजनक जीवन के लिए ये गाइड पर्याप्त कमा लेते हैं। अधिकांश गाइड स्नातक हैं। उनके लिए एक यूनिफॉर्म भी है।

वहां पर्यटन स्थलों पर इंतजाम भी बहुत अच्छे हैं। टिकटों की कमाई में कोई सेंध न लगे, इसे रोकने के लिए टिकट पर्यटक की फोटो के साथ जारी किए जाते हैं। इसमें श्रेणी के हिसाब से ही शुल्क लिया जाता है जिसमें प्रवास की अवधि एक पैमाना होती है कि सैलानी को यह कितने दिन के लिए चाहिए। अमूमन एक से तीन दिनों के टिकट का चलन है। पर्यटक के हवाई अड्डे पर आगमन, परिवहन, आवास, खानपान, खरीदारी, मनोरंजन और सुरक्षा की पूरी प्रक्रिया बेहद पेशेवर है।

इसकी तुलना में यदि भारत को देखें तो उसका भौगोलिक आकार कंबोडिया के दस गुने से भी अधिक है। आबादी भी 75 गुना ज्यादा है और संभवतः कंबोडिया की तुलना में हजारों आकर्षक पर्यटन स्थल हैं। उनमें से कई तो अति प्राचीन हैं। इनके जरिये निश्चित रूप से लाखों पेशेवर गाइडों के रूप में स्वरोजगार के व्यापक अवसर सृजित किए जा सकते हैं।

भारत के पर्यटन क्षेत्र में जीडीपी के लगभग पांच प्रतिशत के बराबर योगदान की संभावनाएं हैं। इससे अरबों डॉलर की विदेशी मुद्रा अर्जित की जा सकती है तो लाखों-करोड़ों लोगों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार मिल सकता है। अफसोस की बात यही है कि इन अवसरों को भुनाने की दिशा में हमारी कोशिशें उतनी दमदार नहीं हैं। इनमें पर्यटन को एक उद्योग के रूप में विकसित करने का प्रयास नहीं होता। हमारे देश में पर्यटन को एक उद्योग बनाने की दिशा में कंबोडिया जरूर बड़ी सीख दे सकता है।

(लेखक सेबी और एलआइसी के पूर्व चेयरमैन हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

प्रभु-तरंग

संसार के लुभावने एवं आकर्षक दिखने वाले जीवनरूपी विविधरंगी तार तभी तक सुंदर और उपयोगी लग सकते हैं, जब तक उनमें ईश्वर रूपी करेंट मौजूद है। देह में प्रभुरूपी शिवत्व के अभाव में देह से व्युत्पन्न सभी आसक्तियां शव रूप में परिणत होकर जीव में विरक्ति के संसार का विस्तारण करती हैं। देवत्व से अनुराग के लिए भौतिकता से वैराग जरूरी है। भौतिकता की जड़ और चेतन में प्राण-प्रतिष्ठा का प्रवाह सुचारू रूप से तभी संभव है, जब ईश्वर रूपी पावर-हाउस से उनकी दयारूपी करुणादृष्टि का स्विच ऑन हो। इसके अभाव में उनमें प्राण रूपी संचार कदापि संभव नहीं है।

प्रभुकृपा के करेंट के बिना मनुष्य की महत्वाकांक्षाओं के महान भवननुमा जीवन में खुशियों की दीपमालाएं नहीं जल सकतीं। जिस प्रकार केवल आकर्षक भवन एवं हवेली को तब तक घर नहीं कहा जा सकता, जब तक उसमें निवास करने वाला मानव प्रसन्न न हो। इसके विपरीत महज त्रिपालनुमा घर में भी प्रभुकृपा से खुशनुमा परिवार देखा जा सकता है। मनुष्य आभाषित आनंद के लिए कामनाओं के जितने पासे फेंकता रहता है, उतनी ही बार असली खुशियों की पूंजी से हाथ मलता महसूस करता जाता है। यदि वास्तविक आनंद केवल भौतिकता में होता तो एक अभीष्ट के बाद मनुष्य वांछित सुख के सरोवर में डूब स्वयं को विश्व का सबसे आनंदित एवं सौभाग्यशाली व्यक्ति घोषित कर चुका होता।

वस्तुतः भौतिकता के एक अभीष्ट की प्राप्ति, पुनः अनंत आकांक्षाओं के द्वार खोल देती है। ये असंख्य द्वार हर पिछले लक्ष्य को दोयम करार कर अगले कल्पित, श्रेष्ठ मुकाम की ओर अग्रसर होने के लिए उकसाते हैं। जीव का चंचल मन, किसी भी पायदान पर पहुंच, कहीं भी उस सुख को बटोर पाने में सक्षम नहीं हो पाता। यदि सुख भौतिक एवं मृत्युमय संसार में होते तो कोई भी व्यक्ति अभागा न महसूस करता। प्रभु-भक्ति के करेंट से तरंगायित संसार अथवा माध्यमों से ही शाश्वत सुख की प्राप्ति संभव है जो पश्चताप, दिग्भ्रम, अनित्य एवं नश्वरता जैसी अस्थिरताओं के भय से सर्वथा मुक्त हैं।

प्रो. दिनेश चमोला 'शैलेश'

बाजार, किताब और लेखक

अंशुमाली रस्तोगी

दिल्ली में हर साल लगने वाला पुस्तक मेला हमारे पढ़ने की भूख को जिंदा रखे रहने का एक खूबसूरत आयोजन है

किताबों और लेखकों, दोनों की दुनिया बदल चुकी है। आज हर किताब और हर लेखक का अपना बाजार है। इसी के सहारे वे अपने पाठकों तक पहुंच रहे हैं। इस बाजार को बनाने में ऑनलाइन प्लेटफॉर्म और सोशल मीडिया की भी महत्ती भूमिका है। लेखक अब अपनी किताब खुद ही बेच रहा है। अपने फेसबुक पेज और ट्विटर खाते से अपनी किताबों का प्रचार-प्रसार कर रहा है। इसका फायदा लेखक को मिला है। ज्यादा से ज्यादा लोग उसे जानने एवं पढ़ने लगे हैं।

ऐसा भी नहीं है कि किताबें सिर्फ ऑनलाइन ही बिक रही हैं। ऑफलाइन भी किताबें बेची जा रही हैं। जब बिक रही हैं तो इसका मतलब लोग पढ़ रहे हैं। अक्सर यह ताना मार दिया जाता है कि लोग अब पढ़ते ही कहां हैं। मोबाइल ने पढ़ने की भूख छीन ली है, पर ऐसा नहीं है। जिन्हें पढ़ने का शौक है, वे आज भी पढ़ रहे हैं। चाहे इंटरनेट पर पढ़ें या किंडल पर, लेकिन पढ़ रहे हैं। खोज-खोजकर पढ़ रहे हैं। पढ़ने के लिए समय निकाल रहे हैं। दिल्ली में हर साल लगने वाला पुस्तक मेला दरअसल हमारे पढ़ने की भूख को जिंदा रखे रहने का एक खूबसूरत आयोजन है। किताबों के दीवाने मेले तक पहुंचते हैं, अपनी पसंद की किताबें खरीदते हैं। इस बहाने उनका उन लेखकों से भी मिलना हो जाता है, जिन्हें वे अब तक पढ़ते आए हैं। पुस्तक मेला भी बाजार में किताबों को स्थापित कर रहा है। यह बात अब हर कोई जान-समझ गया है कि बिना बाजार का सहारा लिए अपनी किताब को बेच पाना असंभव है। लिखा वह जा रहा है, जो बिके। लेखन अगर दिलचस्प होगा तो शर्तिया बिकेगा। श्रीलाल शुक्ल का क्लासिक 'राग दरबारी' इतने वर्ष गुजर जाने के बाद भी आज तक बिंदास बिक रहा है और खूब पढ़ा भी जा रहा है। प्रेमचंद और परसाई को भी पढ़ा जा रहा है।

अब तक इस बात का सेहरा अंगरेजी के लेखकों के सिर पर ही बांधा जाता था कि वे बड़ी खूबसूरती से बाजार में अपनी किताबें बेच लेते हैं। बाजार भी उन्हें हाथों-हाथ लेता है। विज्ञापन के सहारे भी वे अपनी किताब को बाजार और पाठकों के बीच लेकर आते हैं, पर अब हिंदी के लेखक भी खुद को बाजार से जोड़ रहे हैं। वे भी अपनी किताब का प्रमोशन कर रहे हैं। यह आवश्यक भी है। इंटरनेट और सोशल मीडिया ने लेखकों और पाठकों को और नजदीक लाया है। अब पाठक लेखकों की पढ़ी हुई किताबों पर अपनी राय रख सकता है। जबकि कुछ समय पहले तक यह इतना आसान न था। तब संवाद की प्रक्रिया काफी समय लेती थी। खत लिखे जाते थे। तब कहीं जाकर जवाब आता था, मगर अब लेखक और पाठक दोनों एक-दूसरे के करीब हैं।

पुस्तक मेला दिल्ली ही नहीं, बल्कि देश के दूसरे शहरों में भी निरंतर लगता रहना चाहिए। इससे लोगों के भीतर किताब को खरीदकर पढ़ने की आदत तो बनेगी ही, साथ-साथ किताबों की बाजार में मांग भी बढ़ेगी। यह समय बाजार का है। जिस लेखक ने खुद को बाजार के अनुरूप ढाल लिया फिर उसे 'हिट' होने से कोई नहीं रोक सकता।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

जेएनयू की हिंसा में किसका हाथ

दुश्मनी में बदलते वैचारिक मतभेद शीर्षक से लिखे अपने लेख में अवधेश कुमार ने जेएनयू के हिंसक टकराव की निंदा करते हुए इसके समाधान का जो रास्ता बताया है वह अपनी जगह ठीक है, लेकिन इससे दो विपरीत वैचारिक ध्रुवों के बीच पनपने वाली कड़वाहट कम हो पाएगी इसकी संभावना नहीं दिखती। जिन नकाबपोशों ने जेएनयू में हिंसक वारदात की वे कौन थे और किसके निर्देश पर कैंपस में दाखिल हुए थे। इनकी तस्वीरें कैंपस में लगे सीसीटीवी कैमरों में कैद जरूर हुई होंगी। अब ये निष्पक्ष जांच से ही पता लगेगा कि जेएनयू परिसर में हुए हिंसक उत्पात और अराजकता के पीछे किसका हाथ है, लेकिन किसी भी शिक्षण संस्थान में वैचारिक मतभेद को लेकर इस तरह की अराजकता और हिंसा को सही नहीं ठहराया जा सकता। इस दृष्टि से वैचारिक मतभेद से पनपी जेएनयू की हिंसक आग देश के अन्य विश्वविद्यालयों को अपने आगोश में ले, इससे पूर्व त्वरित जांच करके जेएनयू हिंसा के लिए जिम्मेदार नकाबपोश चेहरों को बेनकाब करना जरूरी है। ताकि देश-दुनिया के सामने यह सच्चाई आ सके कि आखिर जेएनयू की हिंसा में कौन से तत्व संलिप्त थे और इस निंदनीय कृत्य के पीछे उनका उद्देश्य क्या था।

pandeyvp1960@gmail.com

जनसंख्या नियंत्रण कानून की दरकार

मोदी सरकार पूरे एक्शन में है। दोबारा सत्ता में आने के बाद सरकार ने कई बड़े फैसले लिए हैं। जैसे अनुच्छेद 370 समाप्त करना, तीन तलाक, नागरिकता संशोधन विधेयक आदि। इस समय देश में जनसंख्या नियंत्रण कानून की बहुत जरूरत है। मोदी सरकार से उम्मीद है कि संसद के अगले अधिवेशन में यह कानून संसद में रखा जाए। मौजूदा समय में जनसंख्या विस्फोट की स्थिति बनी हुई है, जिसका सीधा असर देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। अभी भारत जनसंख्या के मामले में दूसरे नंबर पर है। अगर जल्द ही इस पर नियंत्रण नहीं किया गया तो पहले नंबर पर पहुंच जाएगा। जनसंख्या नियंत्रण कानून बनने से देश समाजिक और आर्थिक रूप से मजबूत होगा। इसलिए भारत सरकार से प्रार्थना है कि वह जनसंख्या नियंत्रण पर कानून बनाए ताकि देश के विकास का रास्ता खुल सके।

विजय किशोर तिवारी, नई दिल्ली

नई राजनीति की शुरुआत

यह पत्र 'काम के आधार पर हमें चुनेगी जनता : केजरीवाल' के संदर्भ में है। दिल्ली में चुनाव की घोषणा के बाद जो दो-तीन बातें उभर कर सामने आती हैं। वह हैं दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल का सकारात्मक बयान। उनका यह कहना कि अगर मैंने आपके लिए पिछले 5 सालों में काम किया है तो ही मुझे वोट दें अन्यथा नहीं। मैं नकारात्मक चुनाव नहीं लड़ूंगा। अगर कांग्रेस या भाजपा के घोषणा पत्र में भी कुछ अच्छा लगा तो पार्टी उसे अपने घोषणा पत्र में शामिल करेगी। ऐसा बहुत कम देखने को मिलता है कि कोई राजनेता चुनाव से पहले इस तरह की बात करे। आमतौर पर चुनाव प्रचार के दौरान राजनेता अपने स्तर से गिरकर शर्मनाक बयान तक दे देते हैं। ऐसे में केजरीवाल के बयान ने राजनीति में एक नई परिपाटी को जन्म दिया है। मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल ने पांच साल पहले दिल्ली की जनता से बहुत सारे वादे किए थे, उनमे से कुछ तो पूरे हुए, लेकिन बहुत कुछ अभी भी बाकी है। अब जनता पर निर्भर है कि वह उनको एक और मौका देना चाहती है या नहीं। भाजपा के सामने सबसे बड़ी दिक्कत दिल्ली में केजरीवाल के बराबर का कोई नेता न होना है। जहां तक कांग्रेस की बात है तो वह शीला दीक्षित के जाने के बाद बिल्कुल अनाथ प्रतीत हो रही है।

बाल गोविंद, नोएडा

ओछी मानसिकता का परिचायक

जेएनयू में जो हिंसा हुई है वह चिंताजनक है। चाहे जेएनयू हो जामिया या अलीगढ़ विश्वविद्यालय। यहां से पढ़ाई कर बच्चे पुलिस अधिकारी, राजनेता, विचारक, कवि व लेखक बनते हैं, लेकिन हिंसक कभी नहीं। यहां सभी धर्म, जाति वर्ग के बच्चे पढ़ते हैं। ऐसा लगता है यहां के बच्चों की साफगोई कुछ लोगों को रास नहीं आ रही। तभी तो सुनियोजित षड्यंत्र कर इन विश्वविद्यालयों को बदनाम करने की परिपाटी चल रही है, जो बहुत ही ओछी मानसिकता का परिचायक है।

hemahariupadhyay@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।